घातक है अल्पसंख्यकवाद

"आश्चर्य का विषय है कि भारतीय संविधान में अल्पसंख्यकों की सुविधा और उनके तुष्टिकरण को लक्ष्य करके कानून तो बनाए गए हैं लेकिन 'अल्पसंख्यक' शब्द की परिभाषा नहीं लिखी गई है, न भारत में इस शब्द के उपयोग का अभिप्राय स्पष्ट किया गया है। यही कारण है कि इस शब्द का प्रयोग भ्रम ज्यादा फैलाता है, और समस्याओं के समाधान में सक्षम नहीं है।" यह बात जब *हिमाचल रिसर्च इंस्टीच्युट और संस्कृति समन्वय संस्थान, जयपुर* के संयुक्त तत्वाधान में, ***"भारत में अल्पसंख्यक: संवैधानिक, जनसांख्यिकीय वस सामाजिक पक्ष"*** विषय पर चण्डीगढ़ में 26-28 जून 2009 को आयोजित, राष्ट्रीय संगोष्ठी में उभरी, तो समस्त देश से आए 150 से ज्यादा बुद्धिजीवियों का समूह जैसे अवाक रह गया था। शायद इसलिए कि इससे पहले किसी ने इस विषय पर गम्भीर चिंतन नहीं किया था। हिमाचल प्रदेश विश्व विद्यालय के *प्रोफेसर डॉ कुल्दीप चंद अग्निहोत्री* द्वारा विषय प्रवर्तन के बाद, जब राष्ट्रीय स्वंय सेवक संघ की केन्द्रीय कार्यकारिणी के सदस्य इन्द्रेश कुमार ने इस विचार गोष्ठी का उद्घाटन करते हुए अपने उद्बोधन में यह कहा कि-'भारत में आ बसे यहूदी और इरानी-पारसी अल्पसंख्यक माने जा सकते हैं, लेकिन कसौटि पर जो अल्पसंख्यक सिध्द नहीं होते वह मजहबी कारणों से विषेश अधिकारों की मांग कर रहे हैं, यद्यपि उन्हें पूजा पध्दति अलग होने के कारण ही अल्पसंख्यक माना जाता है। राजनीतिक दल अपने स्वार्थो की पूर्ति के लिए इस प्रवृति को बढ़ावा दे रहे हैं, जो गलत है। इस विषय में व्यापक बौद्धिक बहस होनी चाहिए, ताकि खतरे टाले जो सके" तो यह बात स्पष्ट हो गई कि भारत में 'अल्पसंख्यकवाद' के सभी स्वरूपों से नहीं, बल्कि धार्मिक 'अल्पसंख्यकवाद' से ख़तरा बढ़ा है, इसलिए इसकी समाप्ति ज़रूरी है।

तीन दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठि में पंजाब के *पूर्व पुलिस महानिदेशक पूरण चंद डोगरा*, राष्ट्रीय सिख संगत के अध्यक्ष *जी.एस.गिल*, शिक्षा उत्थान न्यास के संयोजक *अतुल भाई कोठारी*, अजमेर विश्वविद्यालय के पूर्व उपकुलपति *मोहन लाल छीपा*, हिमाचल के पूर्व प्रांतीय संघचालक *पंडित जगन्नाथ शर्मा*, राजस्थान *अल्पसंख्यक आयोग के पूर्व अध्यक्ष जसवीर सिंह*, संघ प्रचारक एवं उत्तर-पूर्व सांस्कृतिक मामलों के विशेषज्ञ *राम प्रसाद*, इस्लामी विद्वान *शाहिद रहीम*, पांचजन्य अख़बार के संपादक *बलदेव भाई शर्मा* और लेखक *मुजफ्फर हुसैन* आदि कोई 18 लोगों ने विस्तार से इस विषय पर चर्चा की, और मुख्य रूप से तीन बातें उभर कर सामने आई:-

1- ***"अल्पसंख्यकवाद अवधारणा ब्रिटिश साम्राज्य की देन है, जिससे देश का विभाजन हुआ, और यह अवधारणा आज भी सरकारी संरक्षण में यथावत लागू है, जिसका परिणाम है कि भारत के मैदानी इलाकों में बाग्लादेशी मुसलमानों की बढ़ती हुई***

संख्या के तुष्टिकरण और प्राचीन जनजातियों के मतान्तरण से पर्वतीय क्षेत्रों के इसाईकरण को मिली खुली छूट से देश की एकता और अखंडता को खतरा पैदा हो गया है।"

2- *"सच्चर समिति एवं रंगनाथ मिश्रा आयोग ने केवल मुसलमानों और ईसाईयों को अल्पसंख्यक माना है, और अल्पसंख्यक विकास की सारी ज़िम्मेदारी कट्टरपंथियों को हाथ में सौंपी जा रही है। मुख्यधारा के मुसलामानों की उपेक्षा हो रही है जिसके कारण कट्टरपंथियों के सरंक्षण में इस्लामी अतिवाद पनप रहा है जिससे मुस्लिम समुदाय के तालिबानीकरण और देश के पुर्नविभाजन का ख़तरा पैदा हो सकता है। मनमोहन सरकार अल्पसंख्यकवाद में गिरफ्तार हो कर देश की हिन्दु अस्मिता को नाकारने का काम कर रही है।"*

तीसरी बात राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ के निवर्तमान सरसंघचालक माननीय सुदर्शन जी ने अपने समापन भाषण में स्पष्ट की:-

3- **"अल्पसंख्यक अवधारणा के कारण भारत के सामने अनेक संकट खड़े हो गए हैं। अल्पसंख्यक तुष्टि या विकास के नाम पर एक या दो समूह विशेष को सुविधाएं देने की राजनीति पुन: धार्मिक अल्पसंख्यकवाद को बढ़ावा दे रही है, जो निश्चित ही एक अन्य विभाजन का ख़तरा बन सकता है, इसलिए इसे बदलना होगा, यदि इसके लिए संविधान बदलना पड़े, चुनाव प्रणाली बदलनी पडे या जनमानस को बदलना पड़े तो वह भी बदले।"**

विषय समाप्त करते हुए उन्होंने इस मुद्दे पर विचार के लिए समस्त भारत के बुद्धिजीवियों को आमंत्रित किया और दो नीतियां निर्धारित की। एक तो यह कि, "हिन्दुत्व' को मज़हब का प्रर्याय नहीं कहा जा सकता, क्योंकि यह भौगोलिक प्रतीक है, देसरे यह कि इस मुद्दे पर विचार करने के लिए राजनीति स्वार्थो से उपर उठने की ज़रूरत होगी।"

बहस की ज़रूरत

संघ ने इस मुद्दे की प्रसंगिकता पर तो मोहर लगा दी है , लेकिन किसी निर्णय पर पहुंचने से पहले बुध्दिजीवियों के विचार आमंत्रित किए हैं। बौद्ध, जैन और सिख समुदाय इस मुद्दे पर संघ के साथ खड़े हैं। ईसाई और मुसलमानों की तर्कसंगत बौध्दिक प्रतिक्रिया का इंतजार है। यद्‌यपि इस विषय पर एक वर्ष पहले ही इस मुद्दे पर बहस शुरू हो जानी चाहिए थी, जब मुम्बई के निवासी वरिष्ठ पत्रकार पद्मश्री मुजफ्फर हुसैन ने इस विषय पर 'खतरे अल्पसंख्यकवाद के' नामक पुस्तक लिखी थी और दिल्ली के प्रकाशन ने 2008 ई में इसका प्रकाशन किया था। अंग्रेजी में यह किताब मार्च 2004 में ही छप चुकी थी। *'इन्साइट इन्टू माइनॉरिटिज्म'* संयुक्त राष्ट्र ने भी इस विषय के महत्व को समझा और अपने बुद्धिजीवियों के

अध्यन हेतु किताब की 1000 प्रतियां खरीदीं। तात्पर्य यह कि अब इस विषय को न तो अंदेखा किया जा सकता है, न इसे नकारने की गुंहजाइश है।

अवधारणा और लक्ष्य

यह बताने की ज़रूरत नहीं, कि 100 में 1 से 49 तक अल्पसंख्यक होते हैं। इन्साइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइसेज़, मैकमिलन के अनुसार- ***"अल्पसंख्यक वह समूह है, जो उसी समाज में रहने वाले दूसरे समूह से प्रजाति, राष्ट्रीयता, धर्म और भाषा की दृष्टि से भिन्न यथा एक दूसरे के प्रति नकारात्मक दृष्टि रखते है। सत्ता की दृष्टि से दोनों की स्थितियां अलग-अलग हैं और बहुसंख्यक वर्ग अल्पसंख्यक से भेदभावपूर्ण व्यवहार करता है।"***

"भारत के संविधान के धारा 25,26,27,28,29 और 30 के अनुसार अल्पसंख्यकों की सुरक्षा भाषा एवं धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकारों में निहित है।"

शब्द जब अपने अर्थ में व्यक्ति से समूह की ओर, संकीर्णता से व्यापकता की ओर बढ़ जाए, तो केवल विषय नहीं रहता अवधारणा का रूप ले लेता है और यह भी सच है कि अवधारणाएं बदली तो जा सकतीं हैं, लेकिन मिटाई नहीं जा सकती क्योंकि अवधारणाएं मानव समाज के कल्याण का मार्ग होतीं हैं। लेकिन जब वहीं अवधारणा व्यक्ति, समूह या समाज के लिए अभिशाप बनने लगे तो उसका बदले जाना ही ज़रूरी होता है बशर्ते की वांछित परिवर्तन सहिष्णुता और शांति भंग करने का कारण न बने।

'अल्पसंख्यक' ऐसे ही अवधारणा है'। कुछ राजनीतिक दल सत्ता प्राप्ति के लिए इसका उपयोग कर लेते हैं, कुछ नहीं कर पाते। भारत में इसका प्रतिपादन मुस्लिम असंतोष को उभरने से रोकता है। तो पाकिस्तान में इसकी उपेक्षा हिन्दू असंतोष को इतना उभारती है उनका क्रन्दन भारत में सुनाई देता है मुख्यतया इसके तीन रूप हैं। अनुवांशिक, धार्मिक और भाषायी।

हिन्दू कोड बिल प्रस्तुत करते हुए बाबा साहब भीम राव अम्बेडकर ने केवल इसके धार्मिक स्वरूप की व्याख्या की थी- ***"जो धर्म से बाहर आए हैं, और जो भारत के सांस्कृतिक प्रवाह से अलग हैं, केवल उन्हीं को अल्पसंख्यक श्रेणी में रखा जा सकता है।"*** यही कारण था कि उन्होंने जैन, बौध्द और सिखों को हिन्दु समाज से अलग नहीं माना। ऐसी अवस्था में जब सिखों को अल्पसंख्यक आयोग का सदस्य बनाया गया था, तो उन्हें सदस्यता स्वीकृति से इनकार करना चाहिए था, परंतु ऐसा नहीं हो सका। इसी प्रकार मध्यप्रदेश में जब मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह ने 'जैन समाज' को अल्पसंख्यक घोषित किया तो दूसरे प्रांतों के जन समूह भी इस मांग को लेकर खड़े हो गए, किसी ने इन्कार नहीं किया।

अल्पसंख्यकवाद के भाषिक स्वरूप पर नज़र डालें, तो भारत में तमिल, तेलगु, कन्नड़, मलयालम, उड़िया, बांग्ला, असमिया, कैराली और मराठी, गुजराती आदि देश की प्राचीन जनपदिए भाषाओं का समेकित विकास क्यों नहीं हो सका ?

क्या यह अल्पसंख्यकावाद की भाषिक विडम्बना नहीं है, कि ऐसे भिन्न भाषायी क्षेत्रों में राष्ट्र भाषा हिन्दी की ही उपेक्षा हुयी और आज भी चैन्नई गोवा, असम, अरूणाचल आदि भारतीय प्रांतों में हिन्दी भाषा-भाषियों का सार्वजनिक विस्तार किया जाता है? क्या हिन्दी की उपेक्षा देश और राष्ट्र की उपेक्षा नहीं है ?

अल्पसंख्यकवाद का महत्वपूर्ण स्वरूप, अनुवांशिक है, जिसके आधार पर भारत की पिछड़ी ज़ातियों को और आदिवासियों को प्रशासन ने अनुसूचित किया और अबाद गति से उनका विकास जारी है। यदि यह अनुवांशिक अल्पसंख्यकवाद न होता तो दक्षिण अफ्रिका में नेलसन् मंडेला ने आजादी की जंग हार दी होती। रंग भेद आंदोलन की कामयाबी भी अल्पसंख्यकवाद पर ही टिकी है। अमेरिका में बाराक हुसैन ओबामा का राष्ट्रपति बन जाना वास्तव में अनुवांशिक अल्पसंख्यकवाद की विजय है।

वैश्विक धरातल पर अल्पसंख्यकवाद मानव कल्याण का आधार रहा है। यह मानवाधिकारों की रक्षा के लिए समाज और चौकीदार के डंडे और स्कूल मास्टर की छड़ी जैसी है अब अगर कोई इसका उपयोग अनुशासन बनाए रखने की बजाए राहगीरों को लूटने और छात्रों से लंच बॉक्स छीनने के लिए करे, यह चौधरी बनने के लिए अपने ही भाई पर सिर दे मारे!, तो दोष र्'कत्ता' का है, छड़ी या डंडे का नहीं।

मेरी समझ से अनुवांशिक और भाषिक अल्पसंख्यकवाद भारत की प्राचीन वैश्विक अस्मिता का मूल मेरूदंड है। इसी आधार पर सैंकड़ों की संख्या में गुजराती, मराठी, मद्रासी, आदि समुदायों का संयुक्त और समान अधिकार सुरक्षित हो सका और भाषाओं का अस्तित्व बच गया, अन्यथा एकता में समाहित तमात विविधताएं विलीन हो गई होतीं।

परंतु यह भी सच है, कि धार्मिक अल्पसंख्यकवाद ने भारत के वैदिक कालीन भूगोल को खंडित किया है। पाकिस्तान, बंगलादेश, अफ़गानिस्तान, तीनों देश विगत 1000 वर्ष पहले तक भारत का अंश थे, और धार्मिक अल्पसंख्यकवाद के कारण ही विभाजित हुए। आज उन तीनों देशों में, 'संगठित इस्लामीकरण आन्दोलन', यदि दक्षिण एशिया का सबसे बड़ा सर दर्द है, तो भारत के लिए भारत की 25 करोड़ मुस्लिम आबादी 'संगठित इस्लामीकरण आन्दोलन' से प्रभावित हो सकती हैं, क्योंकि अल्पसंख्यक विकास की सारी राशि कट्टरपंथी मुल्ला मोलवी के पास जा रही है, वे इस राशि का सद उपयोग कर पाएंगे, संदेह है 'इस्लामीकरण' में निवेश करने लगे ? तो भारतीय अस्मिता का क्या होगा? शांति और सुरक्षा का क्या होगा? ऐसे ही

कई सवाल हैं, जो धीरे धीरे सामने आएगें, और हमें जवाब के लिए तैयार रहना है, भारत में वैश्विक धरातल पर अल्पसंख्यकवाद के घातक स्वरूप पर प्रतिबंध के लिए।

बी एन शर्मा